Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 19, Issue No. 1, January-2022, ISSN 2230-7540

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 : उच्च शिक्षा के क्षेत्र पर प्रभाव

डॉ० एम० ए० खान[1]*, डॉ० आबिदा ख़ातून[2]

[1] एसोसिएट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञानं/ प्राचार्य, कृष्णा इंस्टिट्यूट ऑफ़ साइंस, बिजनौर

[2] सहायक प्रवक्ता, राजनीति विज्ञानं विभाग, आर० बी० डी० महिला महाविद्यालय, बिजनौर

सारांश - *स्वस्थ ,सशक्त ,समृद्ध ,आत्मनिर्भर तथा श्रेष्ठ भारत के निर्माण की परिकल्पना के साथ राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 अस्तित्व में आ चुकी है। अब इस शिक्षा नीति को धरातल पर प्रभावी रूप से लागु किये जाने का समय है। स्वाभाविक है कि नवीन शिक्षा नीति का वृहद विवेचन होगा। यह भी परीक्षण होगा कि वास्तविकता के धरातल पर यह नीति कितनी व्यावहारिक है। प्रश्न यह उठता है कि 1968 ,1986 तथा 1992 की शिक्षा नीतियों से यह किस प्रकार भिन्न है ? यदि पूर्व कि शिक्षा नीतियाँ देश की आवशयकताओं व अपेक्षाओं को पूरा करने में असमर्थ रही हैं तो नवीन शिक्षा नीति में इसके लिये क्या प्रावधान किये गये हैं?*

नवीन शिक्षा नीति शिक्षा व्यवस्था के अत्यधिक केन्द्रीकरण , व्यवसायीकरण के साथ ही निजीकरण तथा शिक्षा के क्षेत्र में विदेशी भागीदारी का मार्ग प्रशस्त करती हुई दिखाई देती है। त्रिभाषा फार्मूला तथा केन्द्रीय स्तर पर विभिन्न नियामक संस्थाओं को मिलाकर एक संस्था बनाने जैसे प्रावधान समाधान के स्थान पर नवीन समस्याओं को जन्म देंगे , जिससे भारत के संघीय ढाँचे पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा। इसी प्रकार स्नातक स्तर पर मल्टी लेवल एग्जिट व एन्ट्री की व्यवस्था तथा सी बी सी एस (C B C S) आदि को लागु किये जाने हेतु जिन आधारभूत संसाधनों की आवशयकता होगी उनकी व्यवस्था किये जाने की दिशा में सरकार के क्या प्रयास होंगे नवीन शिक्षा नीति में इसका उल्लेख नहीं मिलता है। विशेष बिन्दु यह है कि वर्तमान समय में देश की सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था के 95 % से अधिक भाग का संचालन निजी क्षेत्र के द्वारा किया जा रहा है। वर्तमान सरकार शेष शिक्षण संस्थाओं को भी निजी क्षेत्र को दिये जाने की योजना पर कार्य कर रही है। इसके पक्ष में "कठिन अर्थोपाय" का तर्क तो समझ में आता है परन्तु "राज्य के दायित्व" के निर्वहन को ताक पर रखकर "ईज़ ऑफ़ डूइंग" के सिद्धांत के आधार पर निजी शिक्षण संस्थानों को खुली छूट दिया जाना तर्क से परे की बात है। प्रस्तुत शोध पत्र में इन सभी बिन्दुओं का विस्तार से विश्लेषण किया जायेगा।

कुंजी - *राज्य के दायित्व , कठिन अर्थोपाय , ईज़ ऑफ़ डूइंग ।*

----------x----------

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् देश में उच्च शिक्षा के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति हुई है। उच्च शिक्षा के निमित समर्पित इन संस्थानों में 18 भाषाओं में विज्ञान, कला, वाणिज्य, चिकित्सा, प्रौद्योगिकी, प्रबंधन सहित शिक्षक प्रशिक्षण एवं अनेक व्यावसायिक महत्व के पाठ्यक्रमों की शिक्षा की व्यवस्था है । इन संस्थानों में प्रतिवर्ष लगभग 75 लाख विद्यार्थी प्रवेश पाते हैं, फिर भी कई युवक-युवतियाँ उच्च शिक्षा से वंचित रह जाते हैं। अत: अभी भी काफी संख्या में नए संस्थानों को स्थापित करने की आवश्यकता है।

आज, समय के साथ उच्च शिक्षा को बदलने की एक बहस ही छिड़ गई है। इस बदलाव तथा अनेक नए संस्थानों की स्थापना के लिए सरकार को एक बहुत बड़ी पूंजी की आवश्यकता है, जो वर्तमान समय में सम्भव नहीं दिखता । अत: उच्च शिक्षा का निजीकरण ही एक दूसरा विकल्प बचता है। यदि उच्च शिक्षा की गुणवत्ता और उसकी व्यावहारिकता पर विचार किया जाए तो वर्तमान शिक्षा प्रणाली शिक्षित बेरोजगारों की एक बहुत बड़ी संख्या प्रत्येक वर्ष तैयार करती जा रही है।

प्रतिवर्ष 3-4 लाख बेरोजगारों के नाम रोजगार कार्यालयों में दर्ज हो रहे हैं। इसके अलावा बहुत ऐसे भी बेरोजगार होते हैं जो इन कार्यालयों में अपना नाम दर्ज ही नहीं कराते । रोजगार के अवसर उपलब्ध नहीं हो पाने के कारण कई युवक दिशाहीन होकर गैर-कानूनी कामों की ओर भी उन्मुख हो रहे हैं।

www.ignited.in

सरकार द्वारा उच्च शिक्षा पर किए जा रहे व्यय की ओर देखा जाए, तो यह स्पष्ट होता है कि सरकार का अधिक ध्यान देश की जनसंख्या को शिक्षित करने अथवा प्राथमिक शिक्षा पर ही अधिक केन्द्रित है । उच्च शिक्षा के लिए उच्च संसाधनों की कमी हमेशा से बनी रही है। चौथी पंचवर्षीय योजना के बाद से उच्च शिक्षा पर भारी कटौती की जा रही है । चौथी योजना के दौरान उच्च शिक्षा पर कुल शिक्षा व्यय का 25% भाग खर्च किया गया, वहीं अब नौवीं योजना में मात्र 12% रह गया ।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 के आरंभ से शिक्षा में निजीकरण के प्रवेश का संकेत मिलने लगा । इस नीति में उच्च शिक्षा संस्थानों क बेहतर रूप से संचालित करने के लिए चन्दा इकट्ठा करना तथा इमारतों के रख-रखाव एवं रोजमर्रा के काम में आनेवाली वस्तुओं की पूर्ति में स्थानीय लोगों की सहायता की बात कही गई ।

इस बीच विश्व बैंक द्वारा विकासशील देशों में शिक्षा के खर्च के पैटर्न पर एक रिपोर्ट जारी की गई, जिसमें सलाह दी गई कि आर्थिक संसाधनों की कमी को देखते हुए शिक्षा पर आने वाले खर्च का एक बड़ा हिस्सा अभिवावकों पर डाला जाए । वर्ष 1991 में ढाँचागत समायोजन के अन्तर्गत नरसिम्हाराव सरकार ने आर्थिक उदारीकरण को आगे बढ़ाया, जिसमें स्पष्ट हो गया कि उच्च शिक्षा को विश्व बैंक के सुझावों के अनुरूप ढाला जाएगा ।

उसी दौरान खड़ी संकट की आड में उच्च शिक्षा के बजट में यू.जी.सी. द्वारा 35% की कटौती की गई तथा विश्वविद्यालयों को निर्देश दिया गया कि वे अपने संसाधन स्वयं जुटाने का प्रयास करें । केन्द्र सरकार के निर्देश पर यू.जी.सी. ने 1992 में सर्वोच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति के पुनीया की अध्यक्षता में एक उच्च स्तरीय समिति का गठन किया था । इस समिति का उद्देश्य भारतीय विश्वविद्यालयों के आर्थिक संकट के हल और वैकल्पिक संसाधनों की उगाही के संबंध में सुझाव देना था।

इस समिति ने 1993 में अपनी रिपोर्ट यू.जी.सी. को सौंपी । इस रिपोर्ट में उच्च शिक्षा के निजीकरण के पक्ष में मत व्यक्त किया गया था- "कोई भी समाज जो गरीबी और गैर-बराबरी से जूझ रहा हो, वह विश्वविद्यालयों में हो रही फिजूलखर्ची के सब्सिडीकरण का समर्थन नहीं कर सकता अथवा सम्पन्न तबकों को उच्च शिक्षा पर हो रहे खर्च के भुगतान से बचे रहने की इजाजत नहीं दे सकता है। इसलिए उच्च शिक्षा पर हो रहे वास्तविक खर्च का बड़ा हिस्सा उनसे वसूलना चाहिए ।"

विश्व बैंक द्वारा जारी उच्च शिक्षा-अनुभवों से प्राप्त सबक नामक रिपोर्ट में भारतीय शिक्षा के संबध में स्पष्ट रूप से कहा गया है बेशक यह कहना तार्किक लगता है कि उन विकासशील देशों में जिन्होंने अब तक प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा में पर्याप्त गुणवता, समानता और अपेक्षित उपलब्धता हासिल नहीं की है, वहाँ उपलब्ध सार्वजनिक संसाधनों पर उच्च शिक्षा को प्राथमिकता का दावा नहीं करना चाहिए । क्योंकि आमतौर पर प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा में किए जाने वाले निवेश से कहीं अधिक होता है । केन्द्रीय विश्वविद्यालयों में फीस ढाँचे की समीक्षा और सुधार के संबंध में गठित 'महमूदर्रहमान समिति' तथा दिल्ली वि.वि. में फीस ढाँचे की समीक्षा और सुधार के संबंध में गठित 'आनन्द कृष्णन समिति' की सिफारिशों से भी स्पष्ट हो गया कि अब उच्च शिक्षा का खर्च अभिवावकों पर डालने की तैयारी हो चुकी है ।

इन सारी समितियों की रिपोर्टों का सार यही है कि उच्च शिक्षा पर खर्च वर्तमान आर्थिक परिप्रेक्ष्य में कीमती राष्ट्रीय संसाधनों का उपव्यय है। इस प्रकार अब एक ही विकल्प बचा कि निजी क्षेत्र के लिए उच्च शिक्षा के दरवाजे खोल दिए जाएँ ताकि सरकार के पीछे हटने से होने वाली क्षति की भरपाई हो सके ।

'**पॉलिसी फ्रेमवर्क फॉर रिमार्क्स इन एजूकेशन**' नाम से 24 अप्रैल, 2001 को मुकेश अम्बानी तथा कुमार मंगलम बिड़ला द्वारा व्यापार और उद्योग पर गठित प्रधानमंत्री की सलाहकार परिषद् को उच्च शिक्षा पर एक रिपोर्ट सौंपी गई ।

रिपोर्ट के मुताबिक इसे 2015 के भारत की शैक्षिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर तैयार किया गया है । इस रिपोर्ट के अनुसार 2015 तक उच्च शिक्षा पर 42 हजार करोड़ रुपये खर्च होंगे । इसके अतिरिक्त भारत सरकार को 15 वर्षों में नए संस्थानों के निर्माण में 11 हजार करोड़ की पूंजी लगानी पड़ेगी ।

सरकार के लिए केवल अपने बल पर इतनी पूंजी लगाना सम्भव नहीं है इसलिए उच्च शिक्षा के क्षेत्र में निजी और सरकारी क्षेत्र में क्रमश: 40 और 60 प्रतिशत निवेश की संस्तुति की गई है। इससे उच्च शिक्षा निश्चित तौर पर काफी मंहगी हो जाएगी और यह केवल धनाढ्य वर्गों तक के बच्चों के लिए ही सीमित होकर रह जाएगी ।

हालांकि गरीब और मध्यम वर्ग के बच्चों के लिए ऋण प्रदान करने का भी इस रिपोर्ट में सुझाव दिया गया है, किन्तु यह व्यावहारिक प्रतीत नहीं होता । कारण कि गरीब तबके के अभिभावक इतनी बड़ी राशि का ऋण लेने की हिम्मत ही नहीं पाएंगे।

अगर ऋण ले भी लिया तो चुकाने की क्या व्यवस्था होगी, क्योंकि पढ़ाई कर लेने के बाद रोजगार की भी गारंटी नहीं होगी

। इसके अतिरिक्त इस रिपोर्ट ने अन्य संस्तुतियाँ भी की गई हैं जो निम्न हैं:

1. शिक्षण संस्थानों के पाठ्यक्रम एवं सुविधाओं को समयानुकूल तथा बाजारोन्मुखी बनाया जाए ।
2. व्यावसायिक पाठ्यक्रमों में प्रवेश के लिए सैट, जी.आर.ई. एवं जीमैट के अनुरूप राष्ट्रीय स्तर पर प्रवेश परीक्षाएं आयोजित की जाएं तथा एक आधार पर इनमें प्राप्त प्राप्तांक बनाया जाए ।
3. शिक्षकों के लिए सतत् प्रशिक्षण तथा गुणवत्ता विकास के लिए कानून बनाया जाए।
4. विश्वविद्यालयों, कॉलेजों, संस्थानों तथा स्कूलों के स्तर को निर्धारित करने के स्वतन्त्र एजेंसियों द्वारा समय-समय पर उनकी रेटिंग कराई जाए तथा उनका स्तर तय किया जाए ।
5. शिक्षा में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की अनुमति दी जाए । प्रारम्भ में इसे विज्ञान तथा तकनीकी शिक्षा तक सीमित किया जाए।
6. भारतीय विश्वविद्यालयों तथा संस्थानों में विदेशी विद्यार्थियों को आकर्षित करने के लिए प्रोत्साहित किया जाए । प्रारम्भ में अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति वाले संस्थानों में अन्तर्राष्ट्रीय विद्यालयों की स्थापना की जाए ।
7. सभी राजनीतिक पार्टियों के बीच इस बात की सहमति बनाई जाए कि वे विश्वविद्यालयों और शिक्षण संस्थाओं से दूर रहेंगे । विश्वविद्यालयों और अन्य शिक्षण सस्थाओं में राजनीतिक गतिविधियों पर पाबन्दी लगाई जाए ।
8. स्नातक स्तर और उससे ऊपर हर क्षेत्र में शोध को प्रोत्साहित किया जाए ।
9. अर्थव्यवस्था को नियन्त्रण से मुक्त किया जाए ताकि शिक्षा के लिए बाजार का विकास हो सके ।
10. विश्वविद्यालयों को दी जाने वाली वित्तीय सहायता कम की जाए तथा उन्हें आत्मनिर्भरता की ओर बढ़ाया जाए ।
11. उच्च शिक्षा हेतु सरकार की भूमिका उच्च शिक्षा के सस्थानों की मदद करने, उन्हें कोष प्रदान करने, विद्यार्थियो के कर्ज दिलाने में वित्तीय गारण्टी देने, पाठ्यक्रम तथा उनकी गुणवत्ता में एकरूपता लाने तथा शैक्षिक विकास योजना बनाने तक सीमित की जाए ।
12. कम सरकारी सहायता पाने या नहीं पाने वाले शिक्षण सस्थानो के सचालन तथा पाठ्यक्रम चयन में कल्पनाशीलता की स्वतन्त्रता दी जाए ।
13. विज्ञान, तकनीकी, प्रबन्धन तथा वित्तीय क्षेत्रा मै पढाई के लिए नए निजी विश्वविद्यालय खोलने के लिए 'निजी विश्वविद्यालय अधिनियम' बनाया जाए । इन सुझावो से स्पष्ट है कि उच्च शिक्षा में निजीकरण की शुरुआत हो चुकी है तथा विशेष रूप से इंजीनियरिग, चिकित्सा, प्रबधन, कम्प्यूटर, प्रौद्योगिकी आदि क्षेत्रों में बड़ी तेजी से विस्तार हो रहा है ।

अत: वर्तमान दौर में उच्च शिक्षा के निजीकरण को रोक देना अव्यावहारिक तथा अप्रासंगिक होगा । हों, इसके परिणाम आशाजनक तथा अच्छे हों इन बातों पर जरूर ध्यान रखा जाना चाहिए ।

इसके लिए कुछ सुझाव यों हो सकते हैं:

1. कमजोर वर्ग के योग्य और मेधावी विद्यार्थियों को इन संस्थानों मे शुल्को में पूरी छूट मिलनी चाहिए। इन सस्थानों मे प्रवेश का आधार केवल 'मैरिट' ही रहना चाहिए ।
2. निजी क्षेत्रों को मान्यता देते समय इस बात का सुनिश्चय हो कि वे केवल ख्याति प्राप्त सस्थाओं को ही मिले ताकि उनमे वाणिज्यिक तौर पर कमाई का साधन बनाने की प्रवृत्ति न पैदा हो ।
3. सस्थानो द्वारा सचालित पाठ्यक्रमों तथा शिक्षण कार्य की प्रभावशीलता की नियमित जांच हो ।
4. निजी क्षेत्र के शिक्षा संस्थानों की गुणवता और उनके उत्पाद की प्रभावशीलता की जाँच के लिए भी अलग से नियमित जाच की व्यवस्था हो, ताकि वे अपनी गुणवत्ता के प्रति सजग रहें ।

वर्तमान उदारीकरण के इस युग मे आर्थिक स्थिति को देखते हुए उच्च शिक्षा में निजीकरण की भागीदारी को नकारना व्यावहारिक नहीं लगता। हाँ, इसके निजीकरण की प्रक्रिया को अपनाते समय इस बात पर जरूर ध्यान रखा जाना चाहिए कि निजीकरण से इस पर कोई दुष्प्रभाव न पड़े ।

उच्च शिक्षा के निजी और सार्वजनिक दोनो ही क्षेत्रो मे आमूल-चूल परिवर्तन की आवश्यकता है तथा इसमें व्याप्त विमगतियो को दूर कर दोनो क्षेत्रो को एक-दूसरे के पूरक और सहयोगी बनकर संचालित किए जाने की आवश्यकता है ।

सन्दर्भ - सूची

1. उच्च शिक्षा की दशा एवं दिशा - अतुल कोठारी।
2. शिक्षा के उद्देश्य - प्रोफेसर हवाईडेड।

3. उच्च शिक्षा में गुणवत्ता और स्वायत्तता - सुशील कुमार तिवारी।
4. शिक्षा कैसी हो - पवित्र कुमार शर्मा।
5. नेट के द्वारा प्राप्त जानकारी के आधार पर।

Corresponding Author

डॉ० एम० ए० खान*

एसोसिएट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञानं/ प्राचार्य, कृष्णा इंस्टिट्यूट ऑफ़ साइंस, बिजनौर